अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका

**ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)**

# कामकाजी महिलाओं में कार्यस्थल एवं पारिवारिक तनाव तथा द्वन्द्व का विवेचनात्मक अध्ययन : चयनित कहानियों के संदर्भ में

शशि कुमारी
शोधार्थी, हिंदी–विभाग,
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय अमृतसर, पंजाब। पिन नंबर–143005
ईमेल–shashikumari1051997@gmail.com

शोध सार –समकालीन हिंदी कहानी–साहित्य में कामकाजी महिला का जीवन एक महत्त्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभरकर सामने आया है। आधुनिक शिक्षा, आर्थिक स्वावलंबन और सामाजिक परिवर्तन के कारण महिलाओं की सार्वजनिक क्षेत्र में भागीदारी बड़ी है। अब पारिवारिक ज़िम्मेदारियों के अतिरिक्त कार्यक्षेत्र की चुनौतियों का सामना भी महिलाओं को करना पड़ता है। इन दोहरी ज़िम्मेदारियों के चलते अनेक स्थानों पर महिलाएँ मानसिक तनाव का शिकार हैं। कार्यस्थल पर बढ़ती प्रतिस्पर्धा, लैंगिक भेदभाव, असुरक्षा तथा पारिवारिक दायित्वों का दोहरा बोझ उनके जीवन में तनाव उत्पन्न करता है। आर्थिक आत्मनिर्भरता ने महिलाओं को नई पहचान प्रदान की, फिर भी उनके सामने अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। हिन्दी की समकालीन कहानियाँ इस यथार्थ को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करती हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में चयनित हिंदी कहानियों के आधार पर कामकाजी महिलाओं के कार्यस्थलीय एवं पारिवारिक तनाव तथा द्वन्द्व का विश्लेषण किया गया है।
बीज शब्द– कामकाजी महिला, कार्यस्थल, पारिवारिक तनाव, द्वंद्व, समकालीन हिन्दी–कहानी

द्वन्द्व से अभिप्राय एक ऐसी मानसिक स्थिति से है जिसमें व्यक्ति दो विरोधी स्थितियों के मध्य अपने को उलझा हुआ अनुभव करता है। उसकी यही उलझन उसे संघर्ष की ओर ले जाती है, जिसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति चिड़चिड़ा, संवेदनहीन एवं रसशून्य होने लगता है। हिन्दी शब्दकोश में द्वन्द्व शब्द के अर्थ इस प्रकार हैं–''द्वन्द्व–सं. (पु. )1. दो वस्तुओं का जोड़ा, युग्म 2. लड़ाई–झगड़ा 3. संघर्ष 4. मानसिक संघर्ष 5. उत्पात, उपद्रव।''[1]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है और समाज में रहते हुए जब उसका द्वन्द्व किसी अन्य व्यक्ति से होता है, तो उस द्वन्द्व की चोट सबको दिखाई देती है। उस द्वन्द्व से उत्पन्न घाव अत्यन्त पीड़ादायक होते हैं। लेकिन एक द्वन्द्व ऐसा भी होता है जिसकी चोट किसी को दिखाई नहीं देती। डॉ॰ संगीता शर्मा के शब्दों में–''जिस द्वन्द्व द्वारा मन, हृदय या आत्मा को चोट पहुँचती है, वह अदृश्य होता है तथा उसकी पीड़ा असहय होती है, एक टीस सी उठती है। मार्मिक वेदना से व्यक्ति टूट जाता है लेकिन उसके चटकने टूटने की आवाज़ किसी को नही आती। बस कभी घृणा तो कभी प्रेम भरी घृणा का मिश्रित लावा बहता है, जिसकी गर्माहट केवल वही महसूस कर सकता है जिसने इसे झेला है।''[2]

व्यक्ति जीवन में द्वन्द्व की कई स्थितियाँ उभरकर सामने आती हैं, जैसे–अन्तर्मन में भावनाओं का द्वन्द्व, प्रेम और क्रोध का द्वन्द्व, प्रेम और घृणा के मध्य द्वन्द्व, सगेपन और

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)

लगावहीनता का द्वन्द्व, यथार्थ और कल्पना का द्वंद्व, अभाव और आत्मसंतोष का द्वन्द्व आदि।

समकालीन हिन्दी–कहानी व्यक्ति केन्द्रित कहानी है। इसने व्यक्तिमन की अनेक विडम्बनाओं को बड़े ही सूक्ष्म ढंग से बाहर लाने का प्रयास किया है। इसी परिप्रेक्ष्य में स्त्री जीवन से जुड़ी तमाम समस्याओं को बहुत ही बारीकी से बाहर लाने का प्रयास किया है। आधुनिक स्त्री शिक्षित और आत्मनिर्भर स्त्री है। वर्तमान समय में जहाँ एक ओर वह परिवार की जिम्मेदारियों को निभा रही है तो वहीं दूसरी ओर नौकरीपेशा होने के कारण उसे बाहर की चुनौतियों का सामना भी करना पड़ता है। पारिवारिक सदस्यों का सहयोग उसके लिए आवश्यक हो जाता है। अनेक धरातलों पर यह देखा गया है कि परिवार भी सहयोग नहीं करता और कार्यस्थलों पर भी स्त्रियों को लैंगिक या कम आय के आधार पर प्रताड़ित होना पड़ता है। पारिवारिक दायित्वों और अपने कामकाज को लेकर अधिकतर स्त्रियाँ द्वंद्व की स्थिति में पहुँच जाती हैं। स्त्रियों के स्वांगीण विकास में बाधा डालने वाली मानसिक स्थिति द्वंद्व को अनेक लेखकों एवं लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में दर्शाया है, जिनमें से कुछ लेखिकाओं की कहानियों में वर्णित द्वन्द्व की स्थिति इस प्रकार है–

चित्रा मुद्‌गल की 'सुख' कहानी में कामकाजी महिला के कार्यस्थल एवं पारिवारिक तनाव के द्वंद्व को उजागर किया गया है। कहानी की मुख्य पात्र 'सुमंगला' विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान की प्रवक्ता है। हृदयघात के कारण पति की मृत्यु हो जाती है। अब ससुराल में वह अपनी बूढ़ी सास और बेटी के साथ रहती है। पति की मृत्यु के पश्चात सुमंगला के समक्ष अब नई चुनौतियाँ उभरकर सामने आती हैं। एक विधवा का नए कपड़े और पर्स उठाकर विश्वविद्यालय जाना आस–पड़ोस के लोगों को बिल्कुल नहीं सुहाता। सुमंगला के पास एक दिन स्थायी नौकरी तो है, परन्तु नौकरी में आए दिन तबादलों की दिक्कतें एक स्त्री के लिए बड़ी चिंता का विषय होता है। छोटी बेटी पंछी को लेकर भी वह निरंतर परेशान रहती है। बच्ची को माँ के स्नेह और ममता की आवश्यकता है, परन्तु समुंगला अपने विश्वविद्यालय के कार्यों में ही व्यस्त रहती है। ऐसे में उसके प्रति सास का कटु व्यवहार भी उसे मानसिक आघात ही पहुँचाता है।

''तबादलों के मानसिक दबावों के बावजूद सुख–सुविधा, एकांत, शांत वातावरण में रही सुमंगला को अपनी अड़चनों से ज्यादा पंछी के संस्कारों की चिंता सताने लगी। चौबीसों घंटे उधेड़बुन उस पर तारी रहती कि सासूजी को खूब माफिक आने वाला उनका अपना गली–मोहल्ला पंछी के मानसिक विकास के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है।''[3]

बहू एक नौकरीपेशा स्त्री है, इसलिए सास को चाहिए था कि वह उसका भरपूर साथ निभाए, परन्तु सास बहू और पौती की परवाह किए बगैर अधिकतर समय बड़े बेटे के घर चली जाती। पारिवारिक वातावरण, बेटी पंछी के भविष्य की चिंता एवं काम का दबाव सुमंगला को द्वंद्व की स्थिति में धकेल देता है। कभी–कभी विचार करती है कि नौकरी से त्यागपत्र दे देगी, परन्तु तभी सोचती है कि यदि नौकरी छोड़ दी तो घर का खर्चा चलाना कठिन हो जाएगा। सुमंगला जैसी दशा देश की अधिकतर महिलाओं की दशा है। अंत में वह घर में एक नौकरानी रखने का निश्चय करती है।

''अपने मरे बिना स्वर्ग नहीं मिलने का! नई नौकरी के हौवे के बावजूद उसने हफ्ते–भर की छुट्‌टी लेकर घर के लिए नौकरानी ढूंढने के लिए कमर कस ली। लिफ्ट से ऊपर–नीचे आते–जाते और कई दफा बेवजह आते–जाते, मसलन–मात्र नगरों में अपनी कार्य–कुशलता को प्रमाणित करने वाली दिन में तीन बार वितरित होने वाली डाक के

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)

बहाने उसने इमारत की लगभग बारह–तेरह नौकरानियों से संपर्क साधा और अपनी प्रकृति के प्रतिकूल जाकर, वाणी में अतिरिक्त मिठास घोल, समस्या को चारा बना उनके सामने परोसा।''[4]

फूली नामक लड़की सुमंगला के घर काम करने को तैयार हो जाती है। अंत में फूली भी काम छोड़कर भाग जाती है क्योंकि सुमंगला के घर कोई भी मर्द नहीं था जो फूली के मनोरंजन और उसका उस घर में टिके रहने का कारण बनता।

चित्रा मुद्गल की एक अन्य कहानी 'स्टेपनी' में भी महिला की दोहरी ज़िम्मेदारियों के मध्य द्वन्द्व की स्थिति देखी जा सकती है। 'आभा' नौकरीपेशा स्त्री है। कार्यस्थल पर जाकर वह घर की समृति को कुछ समय के लिए भूल जाती है। दफ्तर से बाहर निकलते ही घर की सारी चिंताएँ और जिम्मेदारियाँ उस पर हावी होने लगती हैं। दफ्तर से छुट्टी मिल भी जाए परन्तु घर की जिम्मेदारियों से कभी छुट्टी नहीं मिलती।

''टमाटर तीन रोज़ से खत्म हुए पड़े हैं। सरकारी मुलाज़िम होने के नाते शनिवार, इतवार उसकी छुट्टी होती है और शनिवार को ही वह साग–सब्ज़ी से लेकर लांड्री–धोबी, नाश्ते पानी के लिए आवश्यक भागा–दौड़ी निपटा लेती है। हमेशा की भांति, पिछले शनिवार की शाम को वह नताशा के घर में दाखिल होते ही चिंकी की ज़िम्मेदारी उसे सौंप मदर डेयरी की सब्ज़ी की दुकान के लिए निकल दी थी।''[5]

बेरोज़गार पति की कमज़ोर आर्थिक स्थिति के कारण वह नौकरी करने को बाध्य है। कई बार विचार करती है कि नौकरी छोड़ दे, परन्तु घर का आर्थिक दबाव उसे नौकरी नहीं छोड़ने देता। घर में नौकरानी भी है। पति का नौकरानी के साथ अवैद्य संबंध है। स्त्री सब कुछ जानती है, परन्तु विवशता के चलते नौकरानी को घर से निकाल भी नहीं सकती। पति का सहयोग भी दिखावा मात्र बनकर रह जाता है।

''अधिक से अधिक वे पानी–वानी भरवा लेंगे या उसे गले तक त्रस्त देख एहसान उंड़ेलते हुए नाश्ते की खातिर टोस्ट सेंक देंगे। अजीब स्थिति है। न नौकरी छोड़ने की सुविधा है उसके पास, न नौकरी करने की।''[6]

चित्रा मुद्गल की कहानियाँ यह बताती हैं कि कार्यक्षेत्र में सफलता प्राप्त कर लेने के बाद भी महिला को मानसिक स्वतंत्रता सहज रूप से प्राप्त नहीं होती।

इसी संदर्भ में हिन्दी साहित्य की प्रख्यात लेखिका ममता कालिया ने हिन्दी कहानी साहित्य में मध्यवर्गीय स्त्री जीवन की तमाम विडम्बनाओं को उजागर किया है। इनकी कहानियों में आधुनिक कामकाजी महिला की समस्याओं और संघर्षों का यथार्थ चित्रण मिलता है।

कई धरातलों पर परिवार में पुत्र के न होने पर पुत्री को ही सारी जिम्मेदारियाँ निभानी पड़ती हैं। लड़की जब कार्यस्थलों पर काम करती है और घर देरी से पहुँचती है तो लोग उसे सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। एक ओर तो कार्यस्थलों पर शोषण और दूसरी ओर पारिवारिक जिम्मेदारियों का बोझ स्त्री जीवन को संघर्ष की ओर ले जाता है। ऐसी स्थिति में स्त्री अपने अस्तित्व से भी दूर होती जाती है। इसी प्रकार के मानसिक द्वंद्व से जकड़ी हुई कामकाजी स्त्री का उल्लेख ममता कालिया की कहानी ''पच्चीस साल की लड़की'' में भी देखा जा सकता है।

कार्यस्थलों पर एक अविवाहित स्त्री का काम करना सही मायनों में किसी के भी गले नहीं उतरता। कहानी में वर्णित पच्चीस साल की अविवाहित स्त्री जिस दफ्तर में काम करती है, वहाँ के बॉस की पत्नी उस स्त्री और अपने पति के सम्बन्धों को संदेह की दृष्टि

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)

से देखती है। बॉस द्वारा लड़की को काम के सिलसिले में अपने घर भेजा जाता है। रास्ते में लड़की इसी उधेड़–बुन में लगी रहती है कि बॉस की पत्नी का सामना करने के बजाय वह अपनी नौकरी ही छोड़ दे। परन्तु नौकरी छोड़ देना समस्या का समाधान नहीं था। यथा:

''मैं बहुत डर गयी। मुझे ऐसा लगा जैसे अब मुझ पर प्रहार होने वाला है। मुझे यह भी लगा जैसे मिसेज शर्मा के मन में यह खटका था कि शर्मा जी मुझ पर प्रेमदृष्टि रखते हैं। तभी तो वे यह बता नहीं रही थी कि शर्मा जी लखनऊ से कब लौटेंगे? मेरा अपराध सिर्फ इतना था कि मैं शर्मा जी की स्टेनो थी, मेरी उम्र पच्चीस थी, मेरा विवाह अभी नहीं हुआ था और उपनिदेशक ने मुझे कुछ कागज़ों पर हस्ताक्षर कराने के लिए यहाँ भेज दिया था।''[7]

यहाँ स्त्री अपने अस्तित्व और सम्मान के लिए संघर्षरत दिखाई देती है। परिवार उनसे त्याग और समर्पण की अपेक्षा करता है, जबकि कार्यस्थल पर उनसे दक्षता और उत्पादकता की माँग की जाती है। इस दोहरे दबाव के कारण वे निरंतर मानसिक तनाव का अनुभव करती है। कार्यस्थल एवं परिवार के मध्य पिसती हुई स्त्री के मानसिक द्वंद्व का उल्लेख ममता कालिया की एक अन्य कहानी ''जाँच अभी जारी है'' में भी देखने को मिलता है। कहानी की मुख्य एवं माता–पिता की एकमात्र संतान अपर्णा दीक्षित कठिन परिश्रम के बल पर बैंक में नौकरी हासिल कर लेती है। उसकी सफलता से माता–पिता भी हर्ष का अनुभव करते हैं। बैंक में काम करते–करते थोड़े ही दिनों बाद अपर्णा के समक्ष यह ज़ाहिर होने लगता है कि उस बैंक में काम करने वाली प्रत्येक लड़की पर वहाँ कार्यरत पुरुष गलत निगाह रखते हैं। छुट्टी के बाद भी वह स्वयं को सुरक्षित महसूस नहीं करती।

''रिक्शा स्टैंड तक अपर्णा को खतरा महसूस होता रहा कि कहीं सिन्हा उसके पीछे न आ जाये। जब वह सकुशल रिक्शे में बैठ गयी, उसने चैन की साँस ली''[8]

कार्यस्थलों पर महिलाओं के साथ होने वाले यौन उत्पीड़न की समस्या गंभीर है। यद्यपि कानून मौजूद है फिर भी अनेक महिलाएँ भय और सामाजिक दबाव के कारण शिकायत नहीं कर पाती। अपर्णा को अपनी उसी नौकरी से नफरत होने लगती है, जिसके लिए उसने दिन रात एक कर दिया था। घर में पिता की बीमार अवस्था उसे यह नौकरी करने के लिए बाध्य करती है।

''घर में माँ या पिता को इस घटना की जानकारी देना निरर्थक दुश्चिंता बढ़ाना होता। वह चुप रही। आज उसकी अकड़ खंडित होते–होते बची थी।''[9]

अपर्णा की अक्कड़ यह थी कि वह कई दिनों से सिन्हा को अनदेखा करने का प्रयास कर रही थी और यदि आज सिन्हा उसे रास्ते में रोक लेता तो अपर्णा की उससे बचने की सारी योजनाएँ व्यर्थ हो जाती।

ममता कालिया की कहानियों में महिला पात्र नौकरी और परिवार के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करती हैं। इसी प्रयास में मानसिक तनाव से ग्रस्त रहती हैं।

समकालीन कथा–साहित्य में कमल कुमार भी उन लेखिकाओं में से हैं जिन्होंने कामकाजी महिलाओं की जीवन चुनौतियों और उनके भीतर चल रहे मानसिक द्वंद्व को अत्यंत सूक्ष्म ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके द्वारा रचित कहानी संग्रह 'घर–बेघर' में संकलित अधिकतर कहानियाँ स्त्री की दोहरी जिम्मेदारियों के मध्य द्वंद्व की स्थिति को बयान करता है। स्त्री को घर पर बाँधने के लिए बेड़ियों की आवश्यकता नहीं होती। घर की जिम्मेदारियाँ उस पर इस कद्र डाल दी जाती हैं कि वह घर से बाहर कदम रखने के

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)

बारे में सोच भी नहीं सकती। अगर महिला नौकरी पेशा है तो तब भी परिवार वाले उससे यही अपेक्षा रखते हैं कि वह बाहर नौकरी के साथ–साथ घर की जिम्मेदारियाँ भी अच्छे से निभाए। ऐसी स्थिति में स्त्री दो नावों पर सवार व्यक्ति की भांति प्रतीत होती है। नाव पर सवार व्यक्ति के मध्य असंतुलन पूरी नाव को डुबा सकता है। कमल कुमार ने अपनी कहानियों में ऐसे पुरुष पतियों का उल्लेख किया है जो स्त्री को मशीन के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझते। वे चाहते हैं कि पत्नियाँ घर और बाहर की ज़िम्मेदारियों को अकेले वहन करे। यदि ऐसे में पत्नियों से यह नहीं हो पाता तो उन्हें नौकरी छोड़ने के लिए बाध्य किया जाता है। उनकी प्रसिद्ध कहानी ''छतरियाँ'' में शोभा के विवाह उपरांत ही ससुराल वाले उसकी नौकरी छुड़वाने के पक्ष में थे। घर और बाहर की ज़िम्मेदारी को बखूबी निभाते हुए भी शोभा ससुराल वालों को खुश करने में असमर्थ रहती है। उसके समक्ष परिवार और नौकरी के चुनाव का द्वंद्व उत्पन्न हो जाता है। यह चुनाव किसी चुनौती से कम नहीं था। शोभा एक बच्ची को जन्म भी देती है। बेटी के जन्म के पश्चात उसकी चुनौतियाँ निरन्तर बढ़ती ही जाती हैं। पति द्वारा ऑफिस से छुट्टी लेने की बात भी परिवार वालो को हज़म नहीं होती।

''देवेन ने छुट्टी ले ली थी। लेकिन घर में यह बात किसी को हज़म नहीं हुई थी। बच्ची की देखभाल भी अब देवेन करेगा और शोभा दफ्तर जाएगी। उसके घर में घुसते ही चक–चक होने लगती। देवेन भी परेशान था। घर के सदस्यों की बातों का असर उस पर हो रहा था।''[10]

भारतीय सामाजिक व्यवस्था की यह एक त्रुटि है कि पुरुष द्वारा घर के कामों में स्त्री का हाथ बटाना किसी को भी मान्य नहीं होता। ऐसे में स्त्री किस से सहयोग की कामना कर सकती है? शोभा घर और नौकरी की चुनौतियों के मध्य गहरी उलझी नज़र आती है। किसी एक का त्याग भी उसके अस्तित्व बोध पर प्रश्न लगा सकता है।

इसी कहानी–संग्रह की एक अन्य कहानी 'मुझे माफ कर दो' है जिसमें एक लापरवाह पुरुष के दर्शन होते हैं। घर और बच्चों की ज़िम्मेदारी को वह अपनी पत्नी का कर्तव्य समझता है। उसे अपने बच्चों व घर की ज़रूरतों को पूरा करने तक का ध्यान नहीं होता। अपना सारा पैसा और समय ऐशो–आराम में ही व्यतीत करता है। ऐसे में पत्नी के भीतर हीन भावना आ जाती है और सोचती है कि उस घर में उसकी स्थिति सिर्फ एक नौकरानी के समान है। उसका पूरा दिन घर और बच्चों की देख–भाल में ही व्यतीत होता है। पत्नी (अलका) ने जब देखा कि पति बच्चों और परिवार को लेकर बिल्कुल भी गम्भीर नहीं है तो मजबूरन उसे पार्ट–टाइम नौकरी करनी पड़ी।

''अलका को बच्चों की फीस के लिए भी कई–कई बार कहना पड़ता था। पर अब वह घर की किसी भी बात की चिंता नहीं करता था। उसने देखा अल्का ने फिर से ऑफिस में पार्ट–टाइम नौकरी ले ली थी।''[11]

स्त्री जीवन की अनेक विडम्बनाओं का मनोवैज्ञानिक अध्ययन कर, उसे अपनी कहानियों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करने का कार्य 'जया जादवानी' ने किया है। अपनी कहानियों के माध्यम से लेखिका यह स्पष्ट करती है कि स्त्री सदियों से अनेक धरातलों पर ठगी जा रही है। वर्तमान समय में उसकी स्थिति में सुधार अवश्य हुआ, परन्तु अभी तक उसे पूर्ण स्वतंत्रता नहीं मिली। किसी भी कार्य को आरम्भ करने के लिए, घर से बाहर जाने के लिए उसे आज भी परिवार वालों की अनुमति लेनी पड़ती है। 'जया जादवानी' की कहानी 'पलाश का फूल' एक ऐसी स्त्री की पारिवारिक स्थिति को उजागर

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)

करती है जहाँ पति पहले से विवाहित और दो बच्चों का पिता है। विवाह के उपरांत बच्चे और परिवार अपूर्वा को अपना नहीं पाते। उस परिवार में अपूर्वा दोषी न होते हुए भी स्वयं को अपराधी महसूस करती है। उसके भीतर आशा है कि एक–न–एक दिन सारा परिवार उसे अपना लेगा, परन्तु उसकी यह आशा निरर्थक सिद्ध होती है। यथाः

''शादी करके वह रोहित के पारम्परिक घर में आ गई, पारम्परिक तो लोग ही होते हैं, पर वह घर भी पारम्परिक था, वह पहली दफा जान पाई। वह घर अजीब था, बीच में बने आँगन के चारों ओर कमरे थे, छोटे से दरवाज़े और छोटे लोगों वाले। कई बार बेजान दीवारों और आदमियों के बीच फर्क करना मुश्किल हो जाता कि बेजान वस्तु है कौन।''[12]

घर के घुटन भरे वातावरण से बाहर निकल कर चाहती है कि अपने पैरों पर खड़े हो। इस विषय पर पति से विचार करती है। पति, रोहित को स्वीकार नहीं होता कि अपूर्वा घर की ज़िम्मेदारियों को छोड़कर बाहर नौकरी करे। अपूर्वा द्वारा स्कूल खोले जाने की बात सुनकर रोहित आग बबूला हो उठता है। दरअसल आज भी ऐसे कम पुरुष हैं जो चाहते हैं कि स्त्री भी आत्मनिर्भर बने। स्त्रियों का आत्मनिर्भर बनना पुरुष को किसी खतरे से कम नहीं लगता। पति रोहित की स्थिति भी ऐसी ही जान पड़ती है। अपूर्वा पति को देखकर सोचती है–

''यही वह शख्स है जिन दिनों स्कूल खोले जाने की प्लानिंग बनाई थी उसने कहा था, ''सॉरी, मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सकता, वैसे भी 'वुमन लिब' के नारे लगा लेना जितना आसान है, उस पर अमल करना उतना ही मुश्किल। तुम दिखा दो न दुनिया को औरत किस तरह जीती है अकेले।''[13]

अपूर्वा को जब किसी का साथ नहीं मिलता तो अपने लिए खुद लड़ती है। घर और नौकरी के द्वंद्व में से अपनी आत्मनिर्भरता का चुनाव करती है।

जया जादवानी की कहानियों की स्त्री पात्र द्वंद्व की स्थिति में पहुँचकर मानसिक तनाव से ग्रस्त अवश्य होती हैं, परन्तु इस तनाव से बाहर निकलने के लिए एक छटपटाहट उनके भीतर विद्यमान है। परिस्थितियों से समझौता कर, स्वयं को चोट पहुँचाना उन्हें स्वीकार्य नहीं। कहानी में वर्णित अपूर्वा भी अपनी स्वतंत्र पहचान का चुनाव करती है।

''दो महीने की जानलेवा भागदौड़ के बाद उसे एक कॉन्वेंट में नौकरी मिल गई। कितने सख्त और खुरदुरे थे वे दिन। कितनी बार टूटी वह, टूटकर फिर उठी......कितनी बार लगा, वह नहीं जी सकती अकेली....कोई औरत नहीं जी सकती पुरुष के बगैर, पर उसने जीना चाहा है, हारना नहीं....कैसे भी....इस संघर्ष में चाहे उसका वजूद ही मिट जाए।''[14]

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आधुनिक कामकाजी महिला अनेक प्रकार के कार्यस्थलीय एवं पारिवारिक तनावों से गुज़रती है। कार्यस्थल पर प्रतिस्पर्धा, लैंगिग भेदभाव, असुरक्षा तथा कार्यभार उसके तनाव के प्रमुख कारण हैं। दूसरी ओर परिवार की ज़िम्मेदारियाँ, बच्चों की देखभाल, सामाजिक अपेक्षाएँ तथा पारिवारिक सहयोग का अभाव उनके मानसिक द्वंद्व को और अधिक गहरा बनाते हैं।

उपरोक्त चयनित कहानियों के अतिरिक्त और भी बहुत सी कहानियाँ हैं जिनमें स्त्री के इसी द्वंद्व पर प्रकाश डाला गया है। समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि कार्यस्थल एवं पारिवारिक तनाव का द्वंद्व आधुनिक कामकाजी महिला के जीवन का केन्द्रीय यथार्थ है। हिन्दी कहानी साहित्य ने इस यथार्थ को संवेदनशीलता और प्रामाणिकता के साथ अभिव्यक्त किया है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 03, (July-Sep 2026)

**ग्रन्थ–सूची**


1. हिन्दी शब्दकोश, हरदेव बाहरी, (संपा.), दिल्ली : राजकमल एण्ड सन्ज़, 2005, पृ–411
2. शर्मा, संगीता. चित्रा मुद्गल की कहानियों में यथार्थ एवं कथाभाषा, नई दिल्ली : सृजनलोक प्रकाशन, पृ–46
3. मुद्गल, चित्रा. आदि–अनादि भाग–3, नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2018, पृ–138
4. वहीं, पृ–139
5. वहीं, पृ–53
6. वहीं, पृ–64
7. कालिया, ममता. उसका यौवन, इलाहाबाद : लोकभारती पेपरबैक्स, 2016, पृ–43
8. कालिया, ममता. जाँच अभी जारी है, इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, 2016, पृ–32
9. वहीं, पृ–33
10. कुमार, कमल. घर–बेघर, नई दिल्ली : पेंगुइन बुक्स इंडिया, यात्रा बुक्स, 2007, पृ–119
11. वहीं, पृ–81
12. जादवानी, जया. अन्दर के पानियों में कोई सपना काँपता है, नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2002, पृ–15
13. वहीं, पृ–14
14. .वहीं, पृ–19